सप्तम अध्याय

उपसंहार

सप्तम अध्याय

उपसंहार

आधुनिक हिन्दी नाटककारों में लक्ष्मीनारायण मिश्र जी का अग्रिम स्थान है। आधुनिक हिन्दी नाटक को विकास की नई दिशा और नूतन-दृष्टि प्रदान करने का श्रेय मिश्र जी को है। मिश्र जी ने जिस समय नाटक क्षेत्र में पदार्पण किया उसी समय हिन्दी नाटक जयशंकर प्रसाद की बहुमुखी प्रतिभा से आलोकित था। परन्तु प्रसादजी इतिहास और पुराण की गौरव गाथाओं को वाणी प्रदान करने में जितने सफल हुए उतने जीवन के समसामायिक भावबोध को चित्रित करने में न हो सके। हिन्दी साहित्य में वर्तमान समाज की ज्वलंत समस्याओं के आधार पर नाटक लिखने का प्रथम श्रेय मिश्र जी को है।

इस लघु-शोध-प्रबंध में मैंने लक्ष्मीनारायण मिश्र जी के 'सिन्दूर की होली', 'संन्यासी' इस सामाजिक समस्या नाटकों का अध्ययन किया हैं। अध्ययन की सुविधा के लिए इसे छः अध्यायों में विभाजित किया है।

प्रथम अध्याय में मिश्र जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व की झाँकी है। इसमें मिश्र जी के जन्म, माता-पिता, बचपन, शिक्षा, नौकरी, साहित्य के प्रति अनुराग, भारतीय संस्कृति केप्रति आस्था तथा उनके नाट्य साहित्य का परिचय दिया है। मिश्र जी एक बहुमुखी प्रतिभासंपन्न रचनाकार है। मिश्रजी बुध्दिवादी कलाकार हैं। उन्होंने बुध्दिवाद पर अपने नाटकों का निर्माण किया है। समाज और व्यक्ति की समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया है। मिश्र जी आधुनिक युग के सर्वाधिक सजग, यथार्थवादी और प्रगतिशील नाटककार हैं। इन्होंने कल्पना, भावुकता और अतिरंजन का बहिष्कार कर मनोवैज्ञानिक समस्या प्रधान नाटकों की रचना कर हिन्दी नाट्य साहित्य को श्रेष्ठ उपलब्धि प्रदान की। वे स्वाभिमानी होने के कारण उन्होंने जीवन में नौकरी नहीं की।

द्वितीय अध्याय में मिश्र जी के 'सिन्दूर की होली' और 'संन्यासी' इन समस्या नाटकों की कथावस्तु का अनुशीलन किया है। इस अध्याय में नाटक का स्वरुप, कथावस्तु का स्वरुप, कथानक की विशेषताएँ तथा दोनों नाटकों की कथावस्तु देकर उसका अनुशीलन किया है। इसमें 'सिन्दूर की होली' नाटक का मुख्य उद्देश मानवतावादी वैचारिक प्रवृत्तियों का प्रतिपादन करना रहा है; तो 'संन्यासी' नाटक का उद्देश भारतीयता का पोषण, उत्सर्ग और त्याग के प्रति जन-रुचि जगाना तथा कर्तव्य के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर देने की प्रेरणा देना रहा है।

तृतीय अध्याय में मिश्र जी के 'सिन्दूर की होली' और 'संन्यासी' नाटक के प्रमुख पात्रों का अनुशीलन किया है। इसमें 'चरित्र' शब्द का अर्थ, नाटक में चरित्र-चित्रण का स्वरुप तथा मिश्रजी के नाटकों में चरित्र-चित्रण किस प्रकार किया है यह स्पष्ट किया है। साथ ही 'सिन्दूर की होली' के प्रमुख पुरुष पात्र मुरारीलाल, मनोजशंकर, माहिरअली तथा स्त्री पात्र मनोरमा और चंद्रकला इन सभी पात्रों के व्यक्तित्व की विशेषता को देखा है। साथ ही 'संन्यासी' नाटक के पुरुष पात्र विश्वकान्त, रमाशंकर, मुरलीधर तथा स्त्री पात्र किरणमयी और मालती के व्यक्तित्त्व पर भी प्रकाश ड़ाला है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि मिश्रजी के पात्रों के चरित्र समाज के यथार्थ का प्रतिनिधित्व करते हैं। पात्रों के चरित्र की सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता सैक्स की समस्या है। नाटककार चरित्रों के चरित्रांकन में परम्परावादी भी है और युगबोध का आख्याता भी। नाटकों के चरित्र-चित्रण एकदम मानवीय है। उनका आलेखन स्वाभाविकता के धरातल पर उतारकर किया गया है। स्वदेश प्रेम मिश्र जी के पात्रों की उल्लेखनीय विशेषता है। इनके पात्रों की यह विशेषता है कि रूढ़िवावदिता का ध्वंस कर समाज के सामने सत्य को रखने का सामर्थ्य रखते हैं।

चतुर्थ अध्याय में मिश्र जी ने 'सिन्दूर की होली' और 'संन्यासी' नाटकों के वातावरण का अनुशीलन किया है। इसमें प्रस्तावना, देशकाल वातावरण से तात्पर्य, परिभाषा तथा स्वरुप,

गुण आदि बातों को स्पष्ट किया है। साथ ही आलोच्य नाटकों के आन्तरिक और बाह्य वातावरण को स्पष्ट किया है। साथ ही आन्तरिक वातावरण के अन्तर्गत घटनाओं और परिस्थितियों का चित्रण, पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण तथा पात्रों के हावभाव और अंतर्द्वद्व का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता के साथ किया है। इसके कारण उचित वातावरण तैयार होकर कथा को गति मिली है। बाह्य वातावरण के अन्तर्गत सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों का विवेचन किया है। इन सभी परिस्थितियों का चित्रण करके नाटक की कथावस्तु को गति देने का प्रयास किया गया है।

पाँचवे अध्याय के अन्तर्गत 'सिन्दूर की होली' और 'संन्यासी' नाटकों में भाषा-शिल्प का अनुशीलन किया है। इसके अंतर्गत भाषा का स्वरुप, शिल्प का अर्थ, शिल्प की परिभाषा, शिल्प का महत्व, भाषा-शिल्प से तात्पर्य, नाटक में भाषा-शिल्प का महत्त्व तथा संस्कृत, अरबी, फारसी, अंगरेजी, देशज, विदेशी, तुर्की, उर्दू, ध्वन्यार्थक शब्द, द्विरुक्त शब्द, अपशब्द आदि विभिन्न भाषाओं के शब्दों का प्रयोग किया है। साथ ही भाषा सौंदर्य की वृध्दि होने के लिए अलंकारिक भाषा, मुहावरे से युक्त भाषा, वाक्य-विन्यास, दार्शनिकता से युक्त भाषा, व्यंग्यपूर्ण भाषा का प्रयोग, ओजपूर्ण भाषा का प्रयोग तथा सीधी, सरल भाषा का प्रयोग नाटक में भाषा के प्रभावोत्पादकता लाने के लिए किया है। भाषा के साथ शैलीयों का भी विवेचन किया गया है। इसमें शैली का स्वरुप, गुण तथा वर्णनात्मक, विवरणात्मक, पत्रात्मक, काव्यात्मक, नाटकीय, दृश्य, दिवास्वप्न तथा पूर्व दिप्ती शैलीयों का प्रयोग किया है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि मिश्र जी के नाटक भाषा-शिल्प की दृष्टि से सफल बन पड़े है। विवेच्य नाटकों का भाषा-शिल्प और शैली प्रभाव सबसे जुदा और सशक्त प्रतीत होता है। मिश्र जी के नाटकों की भाषा सामान्य रूप से प्राय: सरस, सरल, सुबोध, स्वाभाविक, चुस्त एवं प्रभावपूर्ण है। उनके नाटकों में लाक्षणिकता, ध्वन्यात्मकता तथवा चांचल्य की अपेक्षा भाषा की

स्वाभाविकता, स्पष्टता, यथार्थता एवं स्थिरता पर्याप्त मात्रा में है। भाषा द्वारा प्रत्येक पात्र के बोलने हा लहजा, बातचीत करने का ढंग ज्यों - का - त्यों बड़ी कुशलता से उतारा गया है। भाषा शिल्प में भावोचित् शब्द निर्माण एवं शब्द-चयन में नाटककार काफी सफल रहा है। इन नाटकों की भाषा का प्रयोग प्राय: पात्रों की प्रकृति एवं योग्यता के अनुकूल, विषयानुकूल एवं परिस्थिति के अनुकूल हुआ है।

छटे अध्याय में 'सिन्दूर की होली' और 'संन्यासी' इन विवेच्य नाटकों में चित्रित समस्या का चित्रण किया है। इस अध्याय के अंतर्गत प्रस्तावना तथा बाद में समस्या का अर्थ, 'सिन्दूर की होली' नाटक में समस्याएँ जिसमें पट्टीदारों की कलह की समस्या, कानून द्वारा सुरक्षा की समस्या, चिरंतन नारी की समस्या, विवाह की समस्या, स्वच्छंद प्रेम की समस्या, अर्न्तव्दव्द तथा मानसिक संघर्ष की समस्या, रोग के उपचार की समस्या, बुध्दिवादी समस्या, यौन समस्या तथा रिश्वतखोरी की समस्या का चित्रण किया है। साथ ही 'संन्यासी' नाटक में सेक्स एवं शादी समस्या पर आश्रित समस्या, अनमेल विवाह की समस्या, चिरंतन नारीत्व की समस्या, बुध्दिवाद की समस्या, वर्तमान शिक्षा-पध्दति : समस्या, राजनीतिक समस्या आदि समस्याओं का चित्रण किया है। विवेच्य नाटक के अंतर्गत मिश्रजी ने आधुनिक एवं चिरंतन नारीत्व की समस्या को प्रमुख स्थान दिया है। मिश्र जी ने इन समस्याओं का हल अंत में बौध्दिक धरातल पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।